International Journal of Applied Research 2016; 2(3): 86-88

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(3): 86-88
www.allresearchjournal.com
Received: 16-01-2016
Accepted: 19-02-2016

दीप्ति पाण्डेय
प्राचीन भारतीय इतिहास और पुरातत्व विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

Correspondence
दीप्ति पाण्डेय
प्राचीन भारतीय इतिहास और पुरातत्व विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

प्राचीन ऐतिहासिक इमारतों का महत्व, उनका क्षरण व संरक्षण हेतु उपाय

दीप्ति पाण्डेय

सार
ऐतिहासिक इमारतें राष्ट्र के इतिहास को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम हैं। इनके द्वारा हम राष्ट्र के प्राचीन गौरव से ओत-प्रोत होते है। वर्तमान में अनेक मानव कृत, वातावरणीय एवं जैव क्रिया-कलापों से इन वृद्ध इतिहास-साक्षियों के अस्तित्व पर संकट आ गया है। इस लेख में प्राचीन इमारतों के ऐतिहासिक महत्व, उनके क्षरण व संरक्षण हेतु उपायों का वर्णन किया गया है।

कूट शब्द: ऐतिहासिक इमारतें, महत्व, जैव-क्षरण, शैक

विषय प्रवेश
किसी भी राष्ट्र वर्तमान उसके इतिहास पर निर्भर होता है और वर्तमान में उसके भविष्य की झलक होती है। कुल मिलाकर, जितना गौरवमयी किसी देश का इतिहास होगा, विश्व में उस देश का स्थान उतना ही ऊँचा माना जाता है। बीते हुए स्वर्णिम काल का वापस नहीं लाया जा सकता, किन्तु इतिहास के दर्पण में हम उस समय की परिस्थितियों, व्यक्तियों, समाज आदि के बारे में देख सकते हैं। प्राचीन ऐतिहासिक भवन इतिहास के द्रश्यीकरण में महत्वपूर्ण किरदार निभाते हैं और राष्ट्र के प्राचीन इतिहास की गौरव कथा बयान करते हैं। इन्हीं सब कारणों से इन प्राचीन भवनों/इमारतों को संरक्षित रखना किसी भी राष्ट्र के लिए एक कार्य है (अस्थाना एवं लखानी, २००८)।
भारत वर्ष, विश्व की एक अति प्राचीन सभ्यता का प्रतिनिधित्व करता है। आज भी यहाँ ऐसी कई ऐतिहासिक इमारतें, मंदिर, मस्जिद, किले आदि अपना सिर उठाये देश के गौरवमयी इतिहास का बखान कर रहे हैं। किन्तु यदि कुछ अति-महत्वपूर्ण इमारतों (जैसे ताजमहल, कुतुबमीनार आदि) को छोड़ दिया जाये तो देश की हजारों-हजार प्राचीन इमारतों को अत्यधिक हानि पहुँच रही है (सीवार्ड, २००३; अस्थाना एवं लखानी, २००८)। हम इन इमारतों का महत्व जाने बिना, मनमाने ढंग से इन अनमोल धरोहरों के साथ छेड़-छाड़ कर रहे हैं। भारत में इमारतों के लुप्त हो जाने का एक बड़ा कारण पुरानी इमारतों को तोड़कर नई इमारतों का बनाया जाना है। इमारतों के प्रति इस प्रकार की इंसानी बर्बरता के कारण स्मारक गायब होते जा रहे हैं।

ऐतिहासिक इमारतों पर संकट
जैसा की ऊपर बतलाया गया कि, राष्ट्र की विकास-साक्षी इन इमारतों का अस्तित्व आज संकट में है। तो इसका कारण हमारे श्वार्थी कृत्यों के साथ-साथ इन इमारतों की अधिक उम्र व अन्य वातावरणीय कारक भी हैं।

भारी वर्षा, कड़ी धूप तथा तेज हवायें वो प्रमुख वातावरणीय कारक हैं, जिनके कारण इन स्मारकों में विभिन्न प्रकार की समस्याएँ उभर रही हैं जैसे, कहीं दीवार में दरार पड़ रही है तो कहीं इमारतों की छतें ध्वस्त हैं (अस्थाना एवं लखानी, २००८)। चुनिंदा इमारतें ही ऐसी हैं जिनके बारे में लोगों को जानकारी मिलती है अन्य बहुत सी आज भी बदहाल अवस्था में पड़ी हैं। एक तो देश के इतने बड़े भू-भाग में ऐतिहासिक इमारतों का रख-रखाव, संरक्षण दुसाध्य कार्य है, दूसरा जनजागरूकता का अभाव और प्रशासनिक संस्थाओं द्वारा नियम-कानूनों की अनदेखी स्थिति को और बिगाड़ दिया है।

जैव-क्षरण

जैवीय कारकों द्वारा ऐतिहासिक भवनों में होने वाला क्षरण "जैव-क्षरण" कहलाता है। ऐतिहासिक भवनों पर उगने वाले विभिन्न प्रकार पौधे (बरगद, पीपल आदि), विभिन्न थैलोफाइट्स (ब्रायोफाइटा, कवक व शैवाल) तथा शैक इस प्रकार के जैव-क्षरण का मुख्य कारक हैं (स्क्यार्त्ज़मेन एवं वोल्क, १९८९; सीवार्ड, २००३)। इस प्रकार के पौधे मुख्यतः बारिश के मौसम के साथ-साथ उगते हैं और सामान्यता वातावरण में नमी के ख़त्म होने के साथ-साथ ख़त्म हो जाते हैं, किन्तु शैक की उपस्थिति इससे लगभग अप्रभावित रहती है (सिंह एवं धवन, १९९१)।

शैक व जैव-क्षरण

शैक, सहजीविता का अद्भुत उदाहरण हैं (शैक = शैवाल + कवक). ये किसी भी सतह पर अतिसहजता से पनपने की विलक्षण प्रतिभा के धनी होते है (बाजपेयी, २००८)। कवक भाग द्वारा ही ये किसी सतह से चिपक पाते हैं और अपने अन्दर आवश्यक मात्रा में जल का संचय कर पाते है साथ ही साथ ये शैवाल भाग को बाहर के कठोर वातावरण से बचाता है। ग्रीष्म ऋतु में ये शैक, ओस की बूंदों से तथा शरद ऋतु में धुंध से नमीं प्राप्त कर जीवित रहने के लिए जल की कमी को पूरा करते हैं (सीवार्ड, १९९७, २००३; बाजपेयी, २००८)। किसी भी भवन पर इनका पाया जाना, अनेक बातों पर निर्भर करता है जैसे, भवन की उम्र, भवन निर्माण सामिग्री, पानी व नमी का ठहराव, जल धारण क्षमता, सतह (खुरदुरी या चिकनी), वातावरणीय प्रदूषण इत्यादी (विल्सन एवं जोन्स, १९८३)।

ये शैक, ऐतिहासिक भवनों को मुख्यता दो प्रकार से क्षरित करते है, १.भौतिक क्षरण एवं २.रासायनिक क्षरण (सीवार्ड, १९९७, २००३)। भौतिक क्षरण के अन्तर्गत, अनुकूल मौसम में ये अपने परिधि व आकार में वृद्धि करके अपना जीव भर बढाते हैं, परिधि व आकार में वृद्धि के दौरान इनका कवक भाग भवन की सतह की ऊपरी परत को भेद देता है, जिस कारण इन पर पानी व तापमान का प्रभाव अधिक पड़ने लगता है (विल्सन एवं जोन्स, १९८३; सिंह एवं धवन, १९९१)। रासायनिक क्षरण के अन्तर्गत, इन शैक द्वारा उत्पादित जैव-अम्ल एवं द्वितीयक उपापचयी रासायनिक पदार्थ धीरे-धीरे पत्थरों को तोड़ देते हैं। ये दोनों प्रकार का क्षरण एक ही समय साथ-साथ होता है और इमारत के उस स्थान को कमज़ोर कर देता है।

विचार-विमर्श एवं निष्कर्ष

अपनी संस्कृति को लंबे समय तक जीवित रखने के लिए इन प्राचीन इमारतों का संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। यह हमारी नैतिक जिम्मेदारी भी है। पुरातात्विक विरासत संरक्षण सब के लिए एक नैतिक दायित्व के रूप में होना चाहिए। आमतौर पर ये देखा गया है कि आम आदमी में इन ऐतिहासिक समारकों के प्रति कोई जागरूकता नहीं है। अतः स्थानीय सांस्कृतिक स्मारकों का संरक्षण और सुरक्षा के लिए पुरातात्व विभाग, विषय-विशेषज्ञों व पेशेवारों के साथ-साथ स्थानीय निवासियों की भागीदारी भी अतिआवश्यक है। इसके लिए एक सामूहिक व सार्वजनिक, दायित्व प्रबंधन को प्रभावी स्तर पर लागू किए जाने की आवश्यकता है। छोटे-उपेक्षित तथा अनजान ज़िलों, कस्बो में फैली ऐतिहासिक महत्व की इमारतों के संरक्षण की ज़िम्मेदारी स्थानीय निकाय जैसे नगर पालिका, ज़िला पंचायत को दी जा सकती हैं और स्थानीय लोगों की सहायता से छोटी पर कारगर योजनाएँ लागू की जा सकती हैं। प्राचीन इमारतों का संरक्षण सभी का कर्तव्य है और इन ऐतिहासिक धरोहरों को भविष्य के लिए सहेजकर रखने की जिम्मेदारी सबको मिलकर उठानी होगी।

सन्दर्भ

1. बाजपेयी, आर. (२००८) शैक (लाईकेन) द्वारा ऐतिहासिक भवनों का क्षरण। विज्ञान वाणी, २००८: ४६-४७।
2. अस्थाना, के. के. एवं लखानी आर. (२००८) पुरातत्व ऐतिहासिक धरोहरों पर पर्यावरण प्रदूषण का कुप्रभाव एवं संरक्षण। भवन निर्माण सामिग्री उद्योगों से पर्यावरण प्रदूषण एवं नियंत्रण, पेज- ३३-३६।
3. विल्सन, ऍम. जे. एवं जोन्स, डी. (१९८३) सतह सम्बंधित क्षरण विधि व सामिग्री। जिओग्रफिकल सोसायटी, लन्दन, ब्लैकवेल प्रकाशन, पेज- ५-१२।
4. सिंह, ए. एवं धवन एस. (१९९१) लाईकेन द्वारा भारतीय ऐतिहासिक इमारतों में क्षरण के रोचक अवलोकन। जिओफाइटोलाजी, २१: ११९-१२३।
5. सीवार्ड, ऍम. आर. डी. (१९९७) जैव-क्षरण की प्रक्रिया में लाईकेन द्वारा मुख्य प्रभाव। जैव-क्षरण एवं जैव-विघटन, ४०: २६९-२७३।

6. सीवार्ड, ऍम. आर. डी. (२००३) लाईकेन, ऐतिहासिक इमारतों के विघटन के कारक। मैक्रोबिओलोजी टुडे, ३०: ११०-११२।
7. स्क्यार्त्ज़मेन, डी. डब्ल्यू. एवं वोल्क, टी. (१९८९) अपक्षय की जैविक वृद्धि और पृथ्वी की निवास योग्यता। नेचर, ३४०: ४५७-४६०।